Impact Factor-6.261

ISSN-2348-7143

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION'S

RESEARCH JOURNEY

Multidisciplinary International E-Research Journal

PEER REFREED & INDEXED JOURNAL

February-2019

SPECIAL ISSUE-XXX

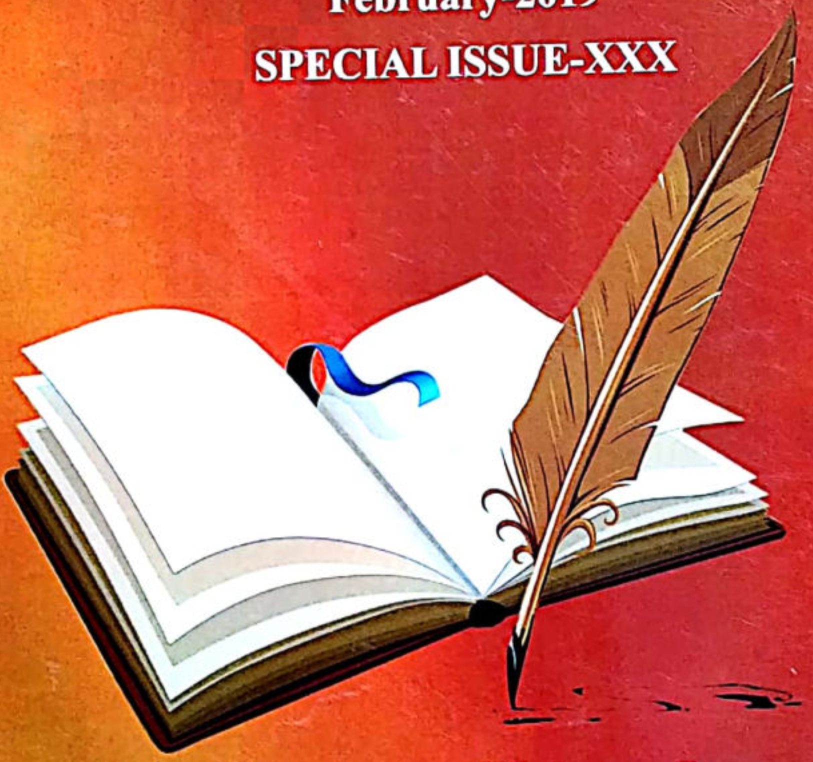

इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य :
संवेदना के स्वर

Guest Editor

Dr.P.K.Koparde
Dr.V.V.Arya

Chief Editor

Dr.Dhanraj T.Dhangar
Assist.Prof.(Marathi)
MGV'S Arts & Commerce College, Yeola,
Dist.Nashik (M.S.)

Scanned with CamScanner

'RESEARCH JOURNEY' International Multidisciplinary E- Research Journal
Impact Factor - (SJIF) – 6.261, (CIF) - 3.452(2015), (GIF)–0.676 (2013)
Special Issue -1- इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य : संवेदना के स्वर
ISSN : 2348-7143
February-2019

42	'21 वीं सदी का संजीव कृत 'फॉस' उपन्यास में –	घोडगे भीमराव रामकिशन	146
43	सुशीला टाकभौर के कथा–साहित्य में दलित विमर्श -	-श्री. संतोष शंकर साळुंखे	149
44	''मोहनदास नैमिशराय कृत उपन्यास 'आज बाजार बंद है'	कु. अनिता कृष्णा भंडारे	153
45	इक्कीसवीं सदी की हिंदी कविता में नारीवादी विचार	प्रा.डॉ. जयश्री वाडेकर	155
46	रुकोगी नहींराधिका' उपन्यास कीसंवेदना और शिल्प	डॉ. गोविन्द पांडव	159
47	इक्कीसवीं सदी की कविता में स्त्री जीवन	डॉ.रेखा मुळे	162
48	महादेव टोप्पो की कविताओं में आदिवासी विमश	संतोष नागरे	164
49	कान्ति त्रिवेदी के उपन्यासों मे स्त्री विमर्श	डोईफोडे रुपाली अशोकराव	167

Our Editors have reviewed paper with experts' committee, and they have checked the papers on their level best to stop furtive literature. Except it, the respective authors of the papers are responsible for originality of the papers and intensive thoughts in the papers. Nobody can republish these papers without pre-permission of the publisher.

- Chief & Executive Editor

Scanned with CamScanner

'RESEARCH JOURNEY' International Multidisciplinary E- Research Journal
Impact Factor - (SJIF) – 6.261, (CIF) - 3.452(2015), (GIF)–0.676 (2013)
Special Issue -1- इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य : संवेदना के स्वर
ISSN : 2348-7143
February-2019

महादेव टोप्पो की कविताओं में आदिवासी विमर्श ('जंगल पहाड़ के पाठ' के विशेष सन्दर्भ में)

संतोष नागरे
सहा.प्रा.- हिन्दी विभाग
र.भ.अट्टल महाविद्यालय,
गेवराई जि.बीड

मुक्त अर्थव्यवस्था के तहत हुए पूँजी के विस्तार ने विश्व बाजार को एक गाँव बना दिया। वैश्वीकरण इस मुक्त बाजारव्यवस्था की उपज है। जिसने मनुष्य को उपभोकता बनाकर उपभोकतावादी संस्कृति को जन्म दिया। उपभोकतावादी संस्कृति में अर्थ का महत्व बढ़ने से सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक तथा प्राकृतिक परिवेश प्रभावित हुआ। वैश्वीकरण से उपजी उपभोकतावादी संस्कृति ने जंगल में घुसपेठ करते हुए प्राकृतिक संसाधनों को लूटने हेतु आदिवासियों को जंगल से बाहर खदेड़ दिया। जिससे आदिवासियों के अस्तित्व का संकट निर्माण हुआ। इसीलिए आदिवासियों ने अपने अस्तित्व तथा जल, जमीन और जंगल की रक्षा के लिए आंदोलन चलाया। इसी आंदोलन ने आदिवासी विमर्श को जन्म दिया। निर्मला पुतुल, रमणिका गुप्ता, महादेव टोप्पो, सुदीप बनर्जी, सुधीर सकसेना, ग्रेस कुजूर, हरिराम मीणा, अनुज लुगन, मुन्ना साह आदि कवियों ने आदिसासियों की शोषणगाथा को बयान करते हुए उनकी मुक्ति के लिए अपनी कविताओं में आवाज उठायी।

महादेव टोप्पो समकालीन हिंदी कविता के शीर्षस्थ रचनाकार हैं। आप भाषा, साहित्य, संस्कृति और कला के विकास के लिए निरंतर सृजनरत है। आपकी कविताओं का केंद्र झारखंड का आदिवासी समाज जीवन रहा है। आपके द्वारा १९८० से २०१४ के बीच लिखी गयी चयनित ४४ कविताओं को 'जंगल पहाड़ के पाठ' कविता-संग्रह में संकलित किया गया है। प्रस्तुत कविता संग्रह अनुज्ञा बुक्स दिल्ली से २०१७ में प्रकाशित हुआ। 'जंगल पहाड़ के पाठ' काव्य-रचना आदिवासियों के दुःख दर्द की संवाहक है। आदिवासियों के जंगल में प्रवेश करते हुए बाहरी घुसपेठियों ने प्राकृतिक संसाधनों का अनिबंध दोहन किया। जिससे आदिवासियों का अस्तित्व ही खतरे में आ गया। अपने अस्तित्व, जंगल तथा मानवता को आज की उपभोक्तावादी संस्कृति से बचाने की बेचैनी तथा जद्दोजहद को महादेव टोप्पो की कविताओं में स्पष्ट देखा जा सकता है। "यह कविता-संग्रह आदिवासी- दुनिया के संघर्ष, जद्दोजहद, आक्रोश, पीड़ा, प्रतिरोध के अतिरिक्त आशाओं, आकाँक्षाओं, सपनों से न केवल परिचित कराता है बल्कि आदिवासी-जीवन और झारखंडी-परिवेश से जुड़े, अनदेखे कई मुद्दों, प्रश्नों की स्थानीयता को, वैश्विक-संदर्भों से भी जोड़कर एक नया आयाम देता है। 'जंगल पहाड़ के पाठ' संग्रह की अधिकांश कविताएँ जहाँ एक ओर- विकास, पूँजीवाद, विस्तारवाद, उपभोक्तावाद, बाजारवाद, अंधराष्ट्रवाद, सामंतवाद, श्रेष्ठतावाद, नस्लवाद की विद्रूपताएँ झेलते आदिवासियों की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, भाषिक, राजनीतिक समस्याओं को लोकतंत्र के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखने, परखने का प्रयास करती हैं, वहीं दूसरी ओर ये कविताएँ धरती, मनुष्य और मनुष्यता बचाने के लिए चिन्तित और बेचैन भी नजर आती हैं।"[१]

आदिवासी इस देश के मूल निवासी हैं। जिनकी उपजीविका पूर्णतः जंगल पर निर्भर होने से उन्हें 'जंगल के दावेदार' भी कहा जाता है। आजादी के सत्तर साल बाद भी आदिवासी समाज विकास से कोसों दूर है। पूँजीवादी व्यवस्था तथा शासनव्यवस्था की साँठ-गाँठ के परिणामस्वरुप आदिवासियों के जल, जमीन और जंगल का दोहन खुले आम किया जा रहा है। जिससे आदिवासियों का अस्तित्व ही खतरे में आ गया है। "जंगल, जमीन और अपनी भाषा तथा संस्कृति से आदिवासी का गहरा जुड़ाव रहा है। वैश्वीकरण और उदारीकरण के युग में मुलभूत सुविधाओं के नाम पर विकास की योजनाएँ शुरु हुई हैं, उनमें सर्वाधिक प्रभावित यह आदिवासी वर्ग ही हुआ है।"[२] लोकतंत्र की नीतियाँ आदिवासियों के जीवन को उजाड़कर पूँजीवादी साम्राज्यवाद को बढ़ावा दे रही है। आदिवासी समूह की पीड़ा को बयान करते हुए महादेव टोप्पो कहते हैं,-

"फिर भी मैं सोचता हूँ
इस लोकतंत्र में एक नागरिक होने का फर्ज निभाता पूछूँ
कि नीति, सिध्दांत, दृष्टिकोण और जनमत का गणित
मेरे गाँव से राजधानी तक हमेशा विपरीत दिशा में क्यों चलते हैं?
हमारे लिए, संविधान और सिध्दांत के व्यवहार में अंतर क्यों है?
कर्तव्य और अधिकार का चेहरा
धन और सत्ता के रंग में पुतकर, बदरंग और वीभत्स क्यों है?"[३]

धन सत्ता और राजसत्ता की मिली-भगत से आदिवासियों के संसाधनों को लूटने हेतु उनको विस्थापित किया जा रहा है। इस लूट में इंजिनियर, बी.डी.ओ., दरोगा, चिकित्सा अधिकारी, शोधकर्ता, पत्रकार, पंडित, पादरी, मौलवी, रक्षक तथा सफेद कपड़े परिधान

Scanned with CamScanner

ISSN : 2348-7143
February-2019

करनेवाले नेता शामिल हैं। बहुरुपियों की तरह मुखौटे लगाकर यह सभी आदिवासियों को लूट रहे हैं। 'फिर भी हम कहते रहे हैं जोहार' कविता में इन बहुरुपियों की पोल खोलते हुए महादेव टोप्पो कहते हैं,-

"अब तुम आते हो अनेक वेशों में
कभी हम तुम्हें पहचान लेते हैं / कभी नहीं पहचानते
आखिर तुमने बहुरुपिये की तरह / धर रखा है कई रुप
कभी इंजिनियर के रुप में / कभी बी.डी.ओ. के वेश में
कभी दरोगा के वेश में / कभी चिकित्सा अधिकारी के रुप में
कभी शोधकर्ता, तो कभी पत्रकार
कभी पंडित, कभी पादरी, कभी मौलवी के वेश में / और तो और
कभी इस देश के रक्षक के रुप में / झकझक सफेद कपड़ों में आते हो।"[४]

लूटेरों के झुंड द्वारा निर्मित चक्रव्यूह में आदिवासी समाज पूरी तरह से फँस चुका है। पूँजीवादी दोपाया जोंको ने आदिवासियों के अस्तित्व, जंगल, जमीन, खेत-खलिहान, भाषा, संस्कृति और इतिहास को उजाड़कर ठूँठ बना दिया है। महादेव टोप्पो रक्त चूसनेवाली दोपाया जोंको से सचेत रहने का इशारा देते हुए कहते हैं,-

"हम है जंगल के वासी
इसलिए रह गये किसी 'ठुंठ' की तरह / बराबर उजाड़े जाते रहने के बावजूद
इस जंगल में / इस पठार में / उन दोपाया जोंकों से लड़ते हुए
जो चूसते नहीं सिर्फ हमारे शरीर का रक्त / चूस लेते हैं हमारे खेत-खलिहान
हमारी भाषा, संस्कृति और- / हमारे इतिहास का भी रक्त।"[५]

आदिवासियों के अज्ञान का लाभ उठाकर लिखनेवालों ने उनका इतिहास गलत तथा एकांगी लिखा। आदिवासियों को जंगली- जानवरों के रुप में ही चित्रित किया गया। अतः आदिवासियों को इन झूठे आरोपों को खंड़ित करने हेतु पढ़-लिखकर अपना इतिहास स्वयं लिखना होगा। अपनी आदमियत को स्थापित करने हेतु रचने होंगे ग्रन्थ। महादेव टोप्पो कहते हैं,-

"इसलिए तुम इतिहास के ग्रन्थों में / हाशिये पर ड़ाल दिये गये हो
या कर दिये गये हो उससे बाहर / इससे पहले की वे पुनः तुम्हारा
अपने ग्रन्थों में बन्दर, भालु आ अन्य किसी जानवर / के रुप में करें वर्णन
तुम्हें अपने आदमी की / खोजनी होगी परिभाषा/उनके सिध्दान्तों, स्थापनाओं, मन्तव्यों के विरुध्द /
उनके बर्बर वैचारिक हमलों के विरुध्द/ रचने होंगे / स्वयं ग्रन्थ।"[६]

आदिवासी समाज अज्ञान के अंधकार में फँसा होने के कारण चतुर्थ श्रेणी के नागरिक की पीड़ा भुगतने के लिए वह आज भी विवश है। आजादी के सत्तर साल बाद भी ज्ञान की रोशनी आदिवासी समाज तक नहीं पहुँच पायी। तो दूसरी ओर एकलव्य के जीवन को चौपट करनेवाले द्रोणाचार्य आज भी समाज के बीच मौजूद है। जो आदिवासियों को आगे आने नहीं देना चाहते। महादेव टोप्पो सीधे-सरल आदिवासियों को उनसे सावधान रहने की सलाह देते हुए कहते हैं,-

"क्योंकि बीसवीं सदी के अन्तिम दशक में / पहुँचने के बावजूद
इस देश के इस समाज के कुछ लोग / आधुनिक विचारों से लैसे होने के
बावजूद दक्षिणा में माँगेगे- तुम्हारा अँगूठा।"७

आदिवासी समाज भले ही अज्ञानी हो, लेकिन वह आधुनिक सभ्य, सुसंस्कृत वर्ग की तुलना में कहीं पर भी में पिछड़ा हुआ नहीं है। प्रकृति को भगवान माननेवाले आदिवासियों की संस्कृति वैज्ञानिक है। आदिवासी समाज जीवनदायिनी औषधि, पर्यावरण, खगोल, भूगोल, प्राणीशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, भूगर्भशास्त्र आदि कई विषयों का जानकर है। सिर्फ उनके पास सभ्य, सुसंस्कृत, शहरी वर्ग की तरह विद्वत्ता का प्रदर्शन करनेवाली नकली डिग्रियाँ नहीं है। आदिवासियों की अज्ञानता, नग्नता, कालेपन, जंगलीपन पर हँसनेवाले बुध्दिजीवियों की पोल खोलते हुए महादेव टोप्पो कहते हैं,-

"रात को तारे देख बता सकते हैं हम-समय
मकड़े, चींटी की देखकर गतिविधि
बता सकते हैं कब होगी बारिश?/ या बदलेगा कब मौसम?
बचा सकते हैं जान भी सूनामी से / जैसे बचे रह गये थे अंडमान में
आपका तो कम्प्यूटर भी / बता नहीं पाता मौसम का सही हाल !
तो बताइये किस बात पर हँसते हैं आप?"[८]

झारखंड़ आदिवासी बहुल राज्य है। अतः झारखंड़ राज्य की निर्मिती के पश्चात राँची की बदली हुई स्थितियों के बारे में महादेव टोप्पो ने 'झारखंड गठन के बाद-कुछ दृश्य' कविता में विस्तारपूर्वक लिखा है। झारखंड की राजधानी राँची अब पर्यटन स्थल के रुप में न उभरकर देश के एक महत्वपूर्ण उद्यमी शहर के रुप ऊभर रहा है। जहाँ एक ओर भौतिक उद्योगों के क्रियान्वयन से झारखंड का भौतिक विकास हो

Scanned with CamScanner

'RESEARCH JOURNEY' International Multidisciplinary E- Research Journal
Impact Factor - (SJIF) – 6.261, (CIF) - 3.452(2015), (GIF)–0.676 (2013)
Special Issue -1- इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य : संवेदना के स्वर
ISSN : 2348-7143
February-2019

रहा है, तो दूसरी ओर प्राकृतिक और सांस्कृतिक विनाश भी। उद्यमी शहर राँची अब कामधेनु गाय बन गया है। जिसका दोहन सरकार, पूँजीपति वर्ग, सरकारी- अर्धसरकारी संस्थानों के अधिकारी, कर्मचारी पूरी ईमानदारी के साथ कर रहे हैं। जहाँ एक दूसरे को काट आगे बढ़ जाने की होड़ लगी है। जमीनों के भाव आसमान छूने लगे है। इस विकास के साथ प्राकृतिक विनाश भी तीव्र गति से हो रहा है। पवित्र नदियाँ गन्दे नालों में परिवर्तित हो चुकी है। बढ़ती गर्मी, धूल, धुएँ से ठंडी हवा गायब हो चुकी है। पक्षियों के कलरव का स्थान भीड़ के शोर ने ले लिया है। राँची में भीड़ का शोर दिन-ब-दिन बढ़ता ही जा रहा है। भौतिक-विकास यात्रा मानवता के अभाव में कहीं विनाश यात्रा न बन जाए, यह आशंका कवि के मन उत्पन्न होती है। शहरी संस्कृति में कवि का दम घूट रहा है। अतः वह नकली बनावटी शहरी सभ्यता से दूर, प्रकृति के सानिध्य में सहज रुप से जीवन जीना चाहता है। महादेव टोप्पो कहते हैं,-

"इसलिए चाहता हूँ लौटना / तुम्हारी मुख्यधारा से छिटककर
पहाडों में बहती क्षीण-धारा के करीब / अपनी कुटिया, अपने गाँव में
जहाँ आदमी कम-से-कम / आदमी के रुप में नहीं, कोई पशु क्रूर
आदमी ही है अपने चेहरे के अन्दर और बाहर।"[९]

सदियों से आदिवासी समाज शोषण को चुपचाप सहता आ रहा है। शोषण के विरुध्द अपनी चुप्पी को उसने तोड़ते हुए अपनी रक्षा के लिए हाथ में शस्त्र उठा लिया। नक्सलवाद इसी की परिणती है। जिसने मंद पड़ी हुई आदिवासियों की चेतना को पुनः प्रज्वलित किया। अपने अधिकारों के प्रति आदिवासियों को सचेत करते हुए महादेव टोप्पो कहते हैं,-

"रोटी तो हम माँगेंगें ही
कटते वृक्ष के साथ चिपकेंगे भी / छिनती जमीन की खातिर देंगे जान भी
मरती अपनी भाषा की खातिर / माँगेंगे तुम्हारे अखबार में दो कॉलम भी
रेड़ियों, टीवी में कुछ घंटे का प्रसारण समय भी।"[१०]

आदिवासियों का अस्तित्व जंगल पर निर्भर है। अतः आदिवासी और जंगल एक दूसरे के पर्याय है। आदिवासी समाज जल, जमीन और जंगल को उजड़ते देख चुप नहीं रह सकता। जंगल के दर्द पर जंगल का कवि अपनी प्रकृति तथा लोक-संस्कृति को बचाए रखने की अपनी संकल्प-बध्दता को बयान करता है-

"जब जंगल की
सारी विद्रोही आवाजों को जंगल के पेड़ों के हरेपन को
हरे-भरे सीना तान / पहाडों पर, घाटियों मे
उगने-लहराने की उनकी आकांक्षा को / महुए की बोतल में /डुबोने की हो साजिश
इस जंगल का कवि रहेगा भला कैसे चुप
वह धनुष उठायेगा / प्रत्यंचा पर कलम चढ़ायेगा
साथ में बाँसुरी और माँदर / भी जरुर बजायेगा।"[११]

सारांश : आदिवासियों का अस्तित्व जंगल पर ही निर्भर है। अतः जंगल बचने पर ही उनका अस्तित्व बना रहेगा। विकास के नाम पर देश के भाग्यविधाताओं ने जंगल में घुसपेठ करते हुए आदिवासियों को विस्थापन के लिए मजबूर किया। यह विकास उनके लिए विनाश साबित हुआ। आदिवासियों को जंगल के बाहर खदेड़कर प्रकृति का अनिर्बंध दोहन किया गया। जिससे आदिवासियों का अस्तित्व ही खतरे में आ गया। जंगल के इस दर्द को महादेव टोप्पो ने अपनी कविताओं के माध्यम से वाणी दी। अपनी प्रकृति तथा लोक-संस्कृति को बचाए रखने की संकल्प बध्दता तथा संघर्षशीलता महादेव टोप्पो की कविताओं में अपने चरम रुप में दष्टिगत होती है। कुल मिलाकर जंगल का कवि महादेव टोप्पो 'जंगल पहाड़ के पाठ' की कविताओं के माध्यम से जंगल के दर्द निवारण हेतु आवाज उठाता है।

संदर्भ ग्रंथ :- १. महादेव टोप्पो, जंगल पहाड़ के पाठ, फलैप
२. संपा. डॉ.उषा कीर्ति राणावत तथा अन्य, आदिवासी केंद्रित साहित्य, पृ.४४
३. महादेव टोप्पो, जंगल पहाड़ के पाठ, पृ.७७
४. वही, पृ. ८६
५. वही, पृ. ९३
६. वही, पृ. १४
७. वही, पृ. ४८
८. वही, पृ. १८-१९
९. वही, पृ. ७०
१०. वही, पृ. २२
११. वही, पृ. ८९.

Scanned with CamScanner